

## भारतीय ज्ञान परम्परा के विविध आयाम

डॉ. शबनम खान

प्राध्यापक- हिन्दी विभाग

माता जीजाबाई शासकीय (स्वशासी) स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इंदौर

भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयामों पर प्रकाश डालने के पूर्व इसके मूल भाव को समझना आवश्यक है। मानवीय चेतना की एक महत्वपूर्ण मूल प्रवृत्ति है – ज्ञान की अभिलाषा। ज्ञान अर्थात् गुरु द्वारा प्रदत्त सैद्धांतिक ज्ञान, अवलोकन या अनुभव द्वारा अर्जित तथ्य, विचार एवं तार्किक बोध। भारत का वृहद ज्ञान हमारे आध्यात्मिक देश के जड़-चेतन एवं वैचारिक धरातल में युग-युग से सतत प्रवाहित एवं समाहित वह ज्ञान है, जिसने भारत की निर्मल धरा को 'विश्वगुरु' की संज्ञा से विभूषित किया था। ज्ञान परंपरा से आशय 'एक स्वचलित ज्ञान श्रृंखला' है। ज्ञान का निरंतर चला आता हुआ विकास क्रम एक अविरल धारा के रूप में ज्ञान-विज्ञान, प्रज्ञान, संज्ञान की हर शाखा-प्रशाखा को पोषित, पल्लवित एवं पुष्पित कर रही है। भारतीय ज्ञान परंपरा विशेष रूप से प्राचीन भारतीय सभ्यता और वैभवपूर्ण संस्कृतिक विरासत के मूल्यों, धार्मिक और दार्शनिक विचारों, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, कला और साहित्य तथा अन्य विविध क्षेत्रों में सतत समृद्ध रही है। यह परंपरा हजारों वर्षों से चली आ रही है और भारतीय संस्कृति का मूल आधार भी है।

भारतीय ज्ञान परम्परा हमें 'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय' की ओर प्रवृत्त करती है। इस प्राचीन ज्ञान अवधारणा की दिशा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास से समाज एवं राष्ट्र निर्माण की ओर निरंतर उन्मुख होती रही है। सुसंस्कृत ज्ञान में ढलकर ही संस्कारवान मनुष्य की संरचना होती है। संस्कारवान जन-मानस मिलकर सभ्य एवं विकसित समाज एवं राष्ट्र की अवधारणा की गढ़ते हैं। प्राचीन काल से ही भारत उच्च मानवीय मूल्यों एवं विशिष्ट अनुसंधान परम्पराओं का देश रहा है। भारतीय सनातन धर्म में वर्णित सभी तैत्तिरीय कोटि ( प्रकार ) के देवी-देवता भी कहीं-न-कहीं ज्ञान-प्रज्ञान के विविध मर्मों एवं निष्काम कर्मों को रेखांकित करते हैं। उनका संकेत रूप में, सत्यम शिवम सुंदरम के मंगल रूप में रहस्योद्घाटन करते हैं। ज्ञानी, ध्यानी, विज्ञानी महर्षियों ने ईश्वर की प्राप्ति के 108 मार्ग प्रतिपादित किए। ऐसा माना जाता है कि देवाधिदेव शिव ने उसमें चार अन्य मार्ग जोड़े। इस तरह कुल 112 मार्गों से ईश्वर की निर्मल आराधना की सुंदर अवधारणा को भारतीय ज्ञान परम्परा एवं दर्शन परंपरा के अंतर्गत समाहित किया गया। हमारी भारतीय ज्ञान परम्परा में नारी को वसुधा का प्रतिरूप माना गया है।

जैसे धरा रत्नगर्भा होती है, वैसे ही नारी अपने अनेक रूपों में मानवीय गुण-रत्नों को जन्म देती है। देवी पार्वती या माता दुर्गा के अनेक रूप इन्हीं उच्च गुणों को प्रदर्शित करते हैं। भगवान विष्णु के दस अवतारों में संयुक्त उच्च मानवीय गुणों से युक्त महामानव ही जन-समुदाय को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करते हैं। उदात्त मानवीय गुणों से ही श्रेष्ठ एवं समृद्ध राष्ट्र की परिकल्पना साकार होती है।

श्रीमद्भागवत गीता, 108 उपनिषद, 4 वेद, 18 पुराण, 18 स्मृतियाँ, षड्दर्शन इत्यादि विशद ग्रंथ समूचे विश्व को भारतीय ऋषियों, मनीषियों की अन्यतम भेंट हैं।

"भारतीय ज्ञान परम्परा में गीता को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। समय के दबाओं में, रचना के इतिहास के रूपांतरण में किसी ग्रंथ विशेष की भूमिका पर भारतीय चिंतन परम्परा में पर्याप्त विचार किया गया है। इसमें वैश्विक स्तर पर सर्वाधिक विचार गीता पर हुआ है। इसलिए भारतीय

संस्कृति में आरंभ से ही जिन मानवीय अथवा सामाजिक मूल्यों पर बल दिया गया, वे मूल्य किसी ग्रंथ विशेष में विश्लेषित हो, ऐसा विशेष ग्रंथ गीता ही है। ऐसा विचारक मानते हैं कि इस ग्रंथ के माध्यम से जीवन के लक्ष्य को ठीक से जानने-समझने में

सहायता मिलती है। आज भी भारतीय चिंतन परम्परा को जानने-समझने के लिए गीता महत्वपूर्ण ग्रंथ है।<sup>1</sup> आदि शंकराचार्य ने सर्वप्रथम गीता पर भाष्य लिखकर इसे अपने प्रस्थान त्रयी में प्रतिष्ठित किया। अल्पायु में ही शंकराचार्य ने 'ब्रह्मसूत्र' पर भाष्य के साथ ही ग्यारह उपनिषदों यथा- ईश,केन,कठ,प्रश्न, मुण्डा, मांडूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, बृहदारण्यक और छांदोग्योपनिषद् तथा श्वेताश्वर उपनिषदों पर भाष्यों की रचना की। उन्होंने अद्वैत वेदांत की सार्थक अभिव्यंजना की तथा सांख्य दर्शन का मूल कारणवाद एवं मीमांसा दर्शन के मूल ज्ञान-कर्म समुच्चयवाद का तर्कसंगत खण्डन किया। कालांतर भक्तिकालीन आचार्यों रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, निम्बार्क, भास्कराचार्य, वल्लभाचार्य, आदि संतों द्वारा महान ग्रंथ गीता पर भाष्य लिखे गए। इन भाष्यों से ही अद्वैत, द्वैत, शुद्धाद्वैत, विशिष्टाद्वैत जैसे दार्शनिक सिद्धांतों का प्रतिपादन हुआ। आधुनिक युग के अन्य विचारकों स्वामी विवेकानंद, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, ओशो रजनीश इत्यादि ने गीता की व्याख्या अपने-अपने ढंग से की।<sup>2</sup> गीता भारतीय धर्म और संस्कृति में सबसे जीवन्त स्वर है और प्रत्येक समय में सार्थक मानस इसमें अपना समाधान ढूँढता आया है। एक सार्थक रचना ही नहीं बल्कि किसी जीवन्त व्यक्ति की तरह प्रत्येक पीढ़ी को गीता अपनी ओर आमंत्रित करती है, नये संदर्भों के लिए प्रेरित करती है ताकि समय और समाज में नयी दीप्ति प्रकाशित हो। इस प्रकार चिंतकों के माध्यम से भी गीता का नवीन संदेश समाज को प्राप्त होता रहा है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में चार वेदों और वेदांत का अत्यधिक महत्व है। भारतीय ज्ञान के क्षेत्र में वेदों का अत्यधिक महत्व है। स्वामी दयानंद सरस्वती ने 'वेदों की ओर चलो' का मंत्र दिया। वेदांत का वास्तविक स्रोत भी वेद है। उसका तात्विक निरूपण करने वाले आचार्य वादरायण हैं। "महर्षि वादरायण के काल में वैदिक धर्मावलम्बियों में मुख्यतः तीन तत्व ज्ञान - कणादि का वैशेषिक दर्शन, गौतम का न्याय और कपिल का सांख्य दर्शन प्रचलित थे। इसमें कणाद भौतिकवाद का, कपिल द्वैत का तथा गौतम द्वैधीभाव का, अनास्था और अविश्वास का प्रचार कर रहे थे। इसके अतिरिक्त अवैदिक मतावलम्बियों में चार्वाक का लोकायत दर्शन, जैनों का अर्हत तथा बौद्धों का तथागत दर्शन प्रचलन में था। ये तीनों अवैदिक दर्शन न तो वेद को मानते थे न ही ईश्वर को।"<sup>3</sup> वस्तुतः भारतीय षड्दर्शन सभी तत्वज्ञानियों को आत्मचिंतन, आत्म मनन एवं आत्मविश्लेषण करने का का अद्वितीय दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। जहाँ न्याय दर्शन तर्क बुद्धि एवं समीक्षात्मक विवेचना पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, वहीं वैशेषिक दर्शन अणुओं-परमाणुओं के संयोजन-विखंडन, बहुगुणन का वैज्ञानिक आधार प्रस्तुत करते हैं। सांख्य, योग, वैशेषिक, मीमांसा और वेदांत दर्शन ने गहन दार्शनिकता का मर्म प्रकट किया है। विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ 'ऋग्वेद' में पृथ्वी को माता मानकर सभी मनुष्यों को उसकी दिव्य संतान माना गया है। अतः सभी एक माता के ही संतान हैं, तब सोचकर देखिए भला कि यहाँ कौन ज्येष्ठ और कौन कनिष्ठ कहलायेगा? सभी की समान भाव से उत्पत्ति हुई।

"तेअज्येष्ठा अकनिष्ठास उद्भिदोऽमध्यमासो महसा वि वावृधुः।"

(ऋग्वेद, 5.59.6)

अर्थात् ( पृथ्वी पुत्रों में ) कोई ज्येष्ठ नहीं, कोई श्रेष्ठ नहीं, कोई कनिष्ठ भी नहीं, कोई निकृष्ट नहीं और कोई मध्यम श्रेणी का भी नहीं। सभी यहाँ एक समान हैं तथा परस्पर मिलकर समान भाव से, समानता के नैसर्गिक अधिकार के साथ उन्नति करते हैं।

हमारा वृहद वैदिक साहित्य भारतीय संस्कृति, सभ्यता और आध्यात्मिकता का मूल आधार है। वैदिक साहित्य में दार्शनिकता, नैतिकता, न्याय और व्यावहारिक शिक्षा का सहज, सरल और सुंदर तालमेल है। इसके साथ ही समरसता की गूढ़ समझ, पुरुष और प्रकृति का समन्वय तथा अलौकिक अंतर्दृष्टि का प्रज्ञान सहस्राब्दियों से भारतीय जीवन शैली को नव-आयाम देता रहा है। वेद, उपनिषद, दर्शन तथा विभिन्न मत हमारे साहित्य, कला, संगीत, खगोल, ज्योतिष, वास्तुकला, योग मुद्राएँ, समस्त क्रीड़ाएँ और समन्वित शासन पद्धति सहित विभिन्न क्षेत्रों को नई दिशा प्रदान करते रहे हैं।

आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर, सुश्रुत, चरक जैसे प्राचीन भारतीय गणितज्ञ, खगोलशास्त्रियों आयुर्वेद आचार्यों ने अंकगणित, बीजगणित, ज्यामिति, चिकित्सा के विविध क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। विकीपीडिया के अनुसार "वराहमिहिर वेदों के ज्ञाता थे मगर वह अलौकिक में आंखे बंद करके विश्वास नहीं करते थे। उनकी भावना और मनोवृत्ति एक वैज्ञानिक की थी। अपने पूर्ववर्ती वैज्ञानिक आर्यभट्ट की तरह उन्होंने भी कहा कि पृथ्वी गोल है। विज्ञान के इतिहास में वह प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने कहा कि कोई शक्ति ऐसी है जो चीजों को जमीन के साथ चिपकाये रखती है। आज इसी शक्ति को गुरुत्वाकर्षण कहते हैं।"<sup>4</sup>

विकीपीडिया की जानकारी हमें बताती है कि "वराहमिहिर ने पर्यावरण विज्ञान (इकालोजी), जल विज्ञान (हाइड्रोलोजी), भूविज्ञान (जिआलोजी) के संबंध में कुछ महत्त्वपूर्ण टिप्पणियाँ कीं। उनका कहना था कि पौधे और दीमक जमीन के नीचे के पानी को इंगित करते हैं। आज वैज्ञानिक जगत द्वारा उस पर ध्यान दिया जा रहा है। उन्होंने लिखा भी बहुत था। संस्कृत व्याकरण में दक्षता और छंद पर अधिकार के कारण उन्होंने स्वयं का एक अनोखी शैली में व्यक्त किया था। अपने विशद ज्ञान और सरस प्रस्तुति के कारण उन्होंने खगोल जैसे शुष्क विषयों को भी रोचक बना दिया है। जिससे उन्हें बहुत ख्याति मिली। उनकी पुस्तक पंचसिद्धान्तिका (पांच सिद्धांत), बृहत्संहिता, बृहज्जात्क (ज्योतिष) ने उन्हें फलित ज्योतिष में वही स्थान दिलाया है जो राजनीति दर्शन में कौटिल्य का, व्याकरण में पाणिनि का है।" प्राचीन समय में सौरमंडल पर आर्यभट्ट का ज्ञान अद्भुत था। यह ज्ञान अपने समय में सदियों आगे का ज्ञान था। सुश्रुत संहिता चिकित्सा और सर्जरी का एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है, वहीं चरक संहिता में आयुर्वेद का अद्वितीय ज्ञान-भंडार समाहित है।

महर्षि पतंजलि द्वारा प्रणीत आष्टांगिक योग दर्शन आज वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठित हो चुका है। मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिए योग व ध्यान की महत्ता स्वयंसिद्ध है। योग के महत्त्वपूर्ण आठ अंग- यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि हमें क्रमशः सर्वांगीण विकास की ओर अग्रसर होने का सन्मार्ग दिखाते हैं। "भारतीय संस्कृति और दर्शन में योग का विशिष्ट स्थान है। योग विद्या से संबंधित ज्ञान भारतीय प्राचीन ग्रंथों में अनेक स्थानों पर देखने को मिलता है। इनमें वेद, पुराण, उपनिषद, श्रीमद्भागवत गीता आदि प्राचीन ग्रंथों में योग विद्या विद्यमान है।"<sup>6</sup> योग सूत्र के प्रणेता महर्षि पतंजलि अपनी रचना 'योग सूत्र' के द्वितीय सूत्र में योग को परिभाषित करते हुए लिखते हैं -

'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' ( पतंजलि योग सूत्र 1/2 )

अर्थात् चित्त या अंतःकरण की वृत्तियों से सर्वथा मुक्त हो जाना ही योग है। योग के दो रूप हैं - राजयोग और हठयोग। जिनका उद्देश्य

मानव जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य को प्राप्त करना है। राज योग को योग दर्शन का उच्चतम और श्रेष्ठ आध्यात्मिक रूप माना जाता है। राज योग का विशुद्ध लक्ष्य समाधि (कैवल्य) प्राप्त होना है। जो निर्मल दिव्य चेतना या परमात्मा के साथ मिलन की उच्च स्थिति है। राजयोग के अभ्यास में सम्यक ध्यान, सहज एकाग्रता एवं संयत मानसिक अनुशासन शामिल है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में दीक्षित होकर अनेक संतों ने जन मानस को समरसता, भाई-चारा और समन्वय का मार्ग दिखाया है। ऐसे संतों में रामानंद, वल्लभाचार्य, रामानुजाचार्य, विठ्ठलनाथ, गोरखनाथ, संत रविदास ( रैदास ), संत कबीर, गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास, दादूदयाल, संत रज्जब, सिंगा जी, गुरुनानक, नामदेव, मीराबाई, सहजोबाई इत्यादि प्रमुख हैं। कबीर की साखियाँ 'ज्ञान की आँख' कही जाती है। उन्होंने सबद और रमैनी द्वारा दिव्य आध्यात्मिक हठयोगिक रहस्यों को उजागर किया।

भारतीय ज्ञान-दर्शन समूचे विश्व के कल्याण की मंगल कामना से अभिप्रेरित एवं निदर्शित है-

"सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत्।"<sup>7</sup>

भारतीय ज्ञान परंपरा विशेष रूप से भारतीय सभ्यता और संस्कृति के मूल्यों, धार्मिक और दार्शनिक विचारों, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, कला और साहित्य तथा अन्यान्य विविध क्षेत्रों में समृद्ध रही है। यह परंपरा हजारों वर्षों से चली आ रही है और भारतीय संस्कृति का पावन मंगलमय मूल आधार है।

भारतीय शिक्षा के इतिहास पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है - प्राचीन काल में शिक्षा का मूल उद्देश्य सर्वजन हिताय की भावना से सदज्ञान की प्राप्ति रहा है। इस उद्देश्य के अनुरूप ही शिक्षा का स्वरूप एवं विविध विषय निर्धारित किए जाते थे। आज के युग की महती आवश्यकता है अध्यात्म को विज्ञान से, परमार्थ को व्यवहार से, परंपरा को आधुनिकता से संयुक्त करते हुए वैयक्तिक, सामाजिक एवं वैश्विक जीवन की चुनौतियों के मध्य समरसता, समानता एवं सौहार्दता की पुनर्स्थापना के लिए एक सहज सूत्र को तलाशने की।

वर्तमान शैक्षणिक परिदृश्य को देखें तो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आधार पर उच्च शिक्षा में शिक्षक-विद्यार्थी तथा शिक्षण-अधिगम के विभिन्न प्रतिमानों में गुणवत्ता लाने के लिए पाठ्यक्रमों में भारतीय ज्ञान परंपरा को समाहित किया जा रहा है। गुणवत्तायुक्त अध्ययन-अध्यापन गुणवत्तापूर्ण जीवन की नींव है। इसको ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा की नवीन रूपरेखा बनाए जाने पर जोर दिया जा रहा है। यह हमारे देश के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक है। इसे जमीनी धरातल पर क्रियान्वित करने के लिए शिक्षाविद् एवं विद्यार्थियों का प्रयास इस दिशा में होना चाहिए कि देश की नींव को सशक्त बनाने में अपना सक्रिय योगदान प्रदान करें।

यह शुभ संकेत है कि भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयामों के संदर्भ में समूचे देश भर में अनेक स्तरों पर निरंतर राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं वेबीनार आयोजित किए जा रहे हैं।

\*\*\*\*\*

**संदर्भ ग्रंथ :-**

1. भाषा और संस्कृति, स्नातक द्वितीय वर्ष, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ- 1 वही, पृष्ठ-3
- भाषा और संस्कृति, स्नातक प्रथम वर्ष, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृष्ठ-74 वराहमिहिर, विकीपीडिया, गूगल खोज वही
- डा. ज्योति जुनगरे, योग एवं ध्यान, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ-5 हरित संदेश, Greenmesg.org, गूगल खोज